संपादकीय

आप सभी को नव–वर्ष की बहुत–बहुत बधाई और भगवान से प्रार्थना है कि किसानों के लिऐ आने वाला वर्ष मंगलमय हो। नव–वर्ष में प्रधानमंत्री मोदी जी ने 'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना' की घोषणा की है, यह किसानों के लिऐ 'फसलों का बीमा करने की योजना' है। वास्तव में इसका परिणाम आने तक यही कहा जा सकता है कि यह सही दिशा में उठाया गया एक उचित कदम है। इस योजना पर विशेष ध्यान केंद्रित करके इसे विकसित करना होगा क्योंकि यह वास्तविकताओं से कहीं परे है। इसी के साथ–साथ अन्य सम्बंधित पहलुओं पर भी विशेष ध्यान देना होगा। इस योजना की भूमिका का महत्व, खाद्य आयात से किसानों पर पडने वाले बुरे प्रभाव को भी समझने की आवश्यकता है। पश्चिमी विश्व में अधिक खाद्य उत्पादन पर आर्थिक सहायता दी जाती है। भारत में इस प्रकार की आर्थिक सहायता आयातित खाद्य प्रदार्थों पर दी जाती है, जिससे इन जिंसों के लिऐ भारतीय किसानों को मिलने वाली कीमत में कमी आती है। इसी कारण भारत के किसान कभी न समाप्त होने वाले दूर्दशा के भंवर में फंसे रहते हैं। इस बारे में मैं 2 फसलों के उदाहरण देना चाहता हूँ :

मक्का : हाल ही में भारत ने आर्थिक सहायता प्राप्त 5 लाख टन मक्का के निशुल्क आयात की अनुमति दी है। इससे मक्का के मूल्यों में रू. 300/– प्रति क्विंटल की उल्लेखनीय कमी आई है। यदि 30 क्विंटल प्रति एकड़ मक्का की फसल का औसत लिया जाऐ तो किसानों को प्रत्येक एकड़ मक्का के औसत उत्पादन पर रू. 9,000/– प्रति एकड़ की हानि होगी। भारत में लगभग 2 लाख एकड़ भूमि पर मक्का उगाई जाती है और इस फसल पर ही रू. 1,80,000 करोड़ की कुल हानि होने की आशंका है। मक्का के 65 प्रतिशत उत्पादन का उपयोग कुक्कुट पालन उद्योग द्वारा किया जाता है और इसके अधिकतम भाग का उपयोग स्टॉर्च के उद्योग के द्वारा किया जाता है। भारतीय किसानों की तरह संगठित न होकर, यह उद्योग संगठित हैं और सरकार को निर्णय लेने में प्रभावित करने की क्षमता रखता है, जिससे मक्का उत्पादकों को प्रत्यक्ष हानि होती है।

संतरे का गाड़ा घोल (कंसन्ट्रेट) : भारत में प्रत्येक वर्ष 15,000 टन संतरे के गाड़े घोल का आयात किया जाता है। भारत इस पर केवल 42 प्रतिशत आयात शुल्क लगाता है, जबकि बांग्लादेश और श्रीलंका जैसे देश भारतीय संतरे पर 100 प्रतिशत का आयात शुल्क लगाते हैं। भारत में इस मांग को पूरा करने के लिऐ भारतीय बगीचों में उगाऐ जाने वाले संतरे/खट्टे की मात्रा काफी है। औसतन भारत में 150 क्विंटल प्रति एकड़ संतरा उगता है। यदि कुल उत्पादन के प्रति हैक्टर के 1/4 भाग को ही प्रसंसाधित किया जाऐ और बाकी माल को थोक मंडियों में बेच दिया जाऐ तब भी 60,000 एकड़ संतरे में से 15,000 टन कंसन्ट्रेट उत्पादित किया जा सकता है। यदि सस्ते संतरे के कंसन्ट्रेट के आयात की अनुमति नहीं दी जाऐ तो भारत में उगाऐ जाने वाले निम्न गुणवत्ता के संतरे की अच्छी मांग होगी जबकि भारत के किसानों को बहुत कम थोक मूल्य मिलता है अथवा कभी–कभी तो कोई खरीदने वाला ही नहीं होता। यदि इन कारणों को

ध्यान में रखकर कंसन्ट्रेट के आयात की अनुमति न दी जाऐ तो भारतीय संतरा उत्पादकों को अपने बगीचों से मिलने वाले लाभ में 50 प्रतिशत तक वृद्धि हो सकती है।

खाद्य आयात

विरासत में अव्यवस्थित कृषि अर्थवयवस्था मिलने के कारण, बुरे से बुरा मॉनसून आने के कारण और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में जिंसों के गिरते हुऐ मूल्य को देखते हुऐ, सरकार किसानों द्वारा आत्महत्या करने को भी ध्यान में रखते हुऐ किसी भी प्रकार से प्रगति दिखाना चाहती है। अपनी ओर से सरकार बजट प्रस्तुत करने से पहले किसानों से संपर्क कर रही है जिससे न केवल किसानों की चिंताओं का समाधान हो सके बल्कि ऐसा लगना भी चाहिऐ कि सरकार किसानों के प्रति चिंतित है।

हाल ही में वर्ष 2016 के पूर्व–बजट कृषि परामर्श में, इसमें वित्त मंत्री ने भी भाग लिया, एक बहुराष्ट्रीय जिंस व्यापार घराने के प्रमुख ने सुझाव दिया कि 'अंतराष्ट्रीय जिंसों के भाव बहुत नीचे हैं और भारत के लिऐ यह उचित समय है कि इनका आयात करके खाद्य सुरक्षा उपाय करने में स्टॉक इकट्ठा कर लिया जाऐ'। यह सुनते ही न केवल मैंने अपनी उदारता खो दी बल्कि अपना धैर्य भी खो दिया। मुझे उसकी उपस्थिति और उसके कथन से आश्चर्य हुआ। एक संकट में फंसी हुई जिंस के फर्म का मालिक हमारे जैसे कई देशों को मूर्ख बना रहा है कि उनकी खाद्य जिंसों पर सरकार आर्थिक सहायता प्रदान कर दे जिनके लिऐ आज कोई खरीददार नहीं है। सस्ते आयात से कृत्रिम रूप से तो जिंसों के मूल्य नीचे चले जाते हैं लेकिन किसानों को ऐसे चक्कर में फंसा देते हैं, जिस कारण वह निरंतर गरीबी का सामना करते हैं और इसके परिणामस्वरूप गांव से शहर पलायन करने की परिस्थतियां उत्पन्न होती हैं।

सर्वप्रथम कृषि क्षेत्र पर वार्तालाप करते समय वार्ता को मूल रूप में अपर्याप्त उत्पादन का भय छोड़ कर हमें खाद्य पौष्टिकता और सुरक्षित आहार पर ध्यान देने की आवश्यकता है। खाद्य की कमी का भूत कई दशकों से हमें ड़रा रहा है और भूखमरी का भय भी सताता रहा है। जहां तक कि लाल बहादुर शास्त्री जी की अपील भी आज तक हमारा शिकार कर रही है जिसमें कहा गया था लोग एक वक्त का खाना न खाऐं, यह भय हमारे मन में घर बना चुका है। इसके अतिरिक्त, तकनीक उपकरण तैयार करने वाली कंपनियां और बड़ी–बड़ी जिंस फर्में भी हमें इसी प्रकार के भय दिखाकर आतंकित करती आ रही हैं। लेकिन भारत काफी समय से हरित भूमि की दिशा में प्रगति कर रहा है। पुराने आतंक और भय बार–बार दिखाऐ जाते हैं कि हमारी जनसंख्या बढ़ने, डाईट में परिवर्तन होने और जलवायु परिवर्तन के कारण खाद्य उत्पादन में वृद्धि

नहीं हो रही है। इन सब चिंताओं पर विचार करते हुऐ इसके विपरित हम किसान महसूस करते हैं कि भारत बिक्री योग्य अधिशेष का उत्पादन कर रहा है लेकिन हमारे उत्पादन का कोई खरीददार नहीं है। भारत के समक्ष मुख्य चुनौती मूल्यों में कमी और उत्पादन मात्रा में उतार–चढ़ाव है, न कि अपर्याप्त उत्पादन। यह सच है कि प्याज और दालें आदि हमारी चिंता बढ़ाती हैं लेकिन इसका प्रमुख कारण कृषि क्षेत्र को न मिलने वाला सहयोग, कारगर कार्यक्रम और उपयोगी नीति तैयार न करना है।

मैं चारों तरफ व्यापक क्षेत्र में फैले हुऐ निराशावाद में अपनी बात पर अटल क्यों हूँ ? इसका प्रथम कारण है हम किसान सदा आशावान होते हैं, दूसरा एक किसान होने के नाते मैं अपनी शक्ति और क्षमता जानता हूँ। मैं आपको अपने खेत का एक उदाहरण देता हूँ जहां पर 1 एकड़ क्षेत्र में 2 ट्रक प्याज, आलू, टमाटर, गाजर या चकोतरा आदि का उत्पादन हो सकता है। भगवान न करे, लेकिन एक उदाहरण के रूप में ही इसे लिजिऐ कि यदि 1 गांव (लगभग 3,000 एकड़ भूमि) वही फसल उगाऐ तो वहां किसी एक फसल के ही 6,000 ट्रक का उत्पादन किया जा सकता है। भारत में 6 लाख से अधिक गांव हैं, यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की उदारता या उत्पादन वहां संभव नहीं है लेकिन यदि इसकी संभावना पर विचार किया जाऐ तो आप स्थिति का मूल्यांकन स्वंय कर सकते हैं।

भारत पहले से ही अनाज, दालों, गन्ने, चाय, मसाले, अंडे, मीट, फल और सब्जियों का विश्व में सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है। यह उपलब्धि हमने तब प्राप्त की है जबकि हमें फसलों का कम उत्पादन मिलता है। बेहतर कृषि तकनीक और अनुसंधान में निवेश करने से उत्पादकता बढ़ाने के कई अवसर हैं। इसके अतिरिक्त, अलग–अलग गांव में उत्पादन की मात्रा में भिन्नता है। इसी प्रकार से अनुसंधान केंद्र पर और उत्तम खेतों पर भी फसल के उत्पादन में भिन्नता है। इन अंतरों को उन्नत विस्तार सेवाऐं उपलब्ध करवाकर समाप्त किया जा सकता है। अनुसंधान आधारित वृद्धि, उत्पादन के अतिरिक्त कृषि क्षेत्र में 1/4 उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है, जिसके लिऐ अतिरिक्त उपकरणों की आवश्यकता नहीं होगी (बीजों की भी कम मात्रा चाहिऐ होगी), किंतु इसके लिऐ हमें फसल उगाने वाली मशीनरी और उपकरणों में सुधार करना होगा। यदि किसान को मशीनों की खरीद करनी पड़े तो वह ऋणी हो जाऐगा, दूसरी तरफ यह मशीनरी उसे लीज पर उपल्बध कराई जाऐ तो वह समृद्ध हो सकता है। केवल लक्ष्य निर्धारित करने से ही आधा काम हो जाता है, किंतु किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति के लिऐ उसे ढंग से क्रियान्वित करना प्रमुख कार्य होता है।

भारत विश्व में सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक है और भारतीय सहकारी संस्थाऐं माल न बिकने के कारण, सस्ते आयातित सहायता प्राप्त घटिया दूध के आयात के कारण, उधार ली गई राशि पर ब्याज देने के कारण समाप्त होती जा रही हैं। देश में दूध का उत्पादन 1/3 और बढ़ सकता है यदि देशभर में ऐन.ड़ी.ड़ी.बी. के स्वास्थ्य कार्यक्रम को मानक रूप से लागू कर दिया जाऐ। जब फसल पकती है तब से ही इसके बेहतर संचालन की आवश्यकता होती है और तब तक

आवश्यकता रहती है जब तक कि यह खाने की मेज पर नहीं पहुंच जाता। बेहतर संचालन करने से ही अनाज की बर्बादी कम हो सकती है और खाने के लिऐ 15 प्रतिशत अधिक आहार प्राप्त हो सकता है।

किसानों की सबसे बड़ी चिंता अपर्याप्त उत्पादन नहीं है। सिंचित क्षेत्रों में किसानों को माल बेचने के लिऐ बाजार की चिंता सताती है और वर्षा आधारित क्षेत्रों में उन्हें पानी की उपलब्धता की चिंता रहती है। यह तो समय ही बताएगा की हमारे से जो परामर्श मांगे गऐ हैं, उन्हें वर्तमान योजनाओं में लागू करेंगे अथवा कोई और नऐ तर्क स्वीकार किऐ जाऐंगे। कृषि संकट के समाधान के लिऐ *नियत* से अधिक एक *नीति* की आवश्यकता है, जहां पर तैयार किऐ गऐ फाईनप्रिंट में किसानों की सर्वसम्मति हो।

गन्ने की खेती छोड़ रहे हैं किसान

श्री के.सी. त्यागी – सांसद, राज्य सभा (जे.डी. (यू.))

हाल में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रीमंडल की बैठक में 47.50 रूपये प्रति क्विंटल के हिसाब से गन्ना किसानों को सब्सिडी देने का फैसला किया गया। इसको इस तरह प्रचारित किया गया जैसे यह किसानों को राहत पहुंचाने का फैसला हो। लेकिन हकीकत यह है कि यह निर्णय विश्व व्यापार संगठन के दबाव में लिया गया है और इसका मकसद चीनी मिल मालिकों को लाभ पहुंचाना है। किसानों को इस राशि का जरा भी फायदा नहीं मिलने वाला। यह पूरी रकम गन्ने के 'उचित एवं लाभकारी मूल्य' का हिस्सा होगी। चीनी उद्योग विकास के कोष से इस राशि का भुगतान किया जाएगा।

इस बार चीनी मिलों ने लगभग दो हफ्ते की देरी से पेराई शुरू की है, जिसके चलते गन्ना किसानों को अपना गन्ना कोल्हू मालिकों को औने–पौने दाम पर बेचना पड़ा है। कोल्हू मालिक किसान को नगद पेमेंट करते हैं इसलिए मजबूरन किसान उन्हें सस्ते दाम पर गन्ना बेच रहे हैं।

दूसरा कारण यह भी है कि पेराई में देरी होने के कारण फसल देर तक खड़ी रहती है, जिससे खेत खाली नहीं हो पाता है। खेत समय से खाली नहीं हुआ तो रबी की बुआई नहीं हो पाती और दोहरा नुकसान उठाना पड़ता है। किसान की यह विवशता सरकारें और चीनी मिल मालिक बखूबी समझते हैं। पेराई में देरी इसीलिए की जाती है, ताकि मिलें औने–पौने दाम पर गन्ना खरीद सकें।

मिलों पर मेहरबानी

एसोचैम की एक रिपोर्ट बताती है कि किसान बढ़ते कर्ज, चीनी मिल मालिकों से लगभग 4700 करोड़ रूपये का पिछला भुगतान न होने और गन्ने का उचित मूल्य न मिलने के कारण दूसरी फसलों की ओर मुड़ रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार वर्तमान पेराई सत्र में 2.70 करोड़ टन चीनी उत्पादन की उम्मीद है, जबकि पिछले साल 2.83 करोड़ टन उत्पादन हुआ था। चीनी उत्पादन में गिरावट और आक्रामक चीनी निर्यात नीति के कारण अगले साल गर्मियों तक चीनी की घरेलू कीमतों पर दबाव बढ़ सकता है। ऐसा हुआ तो उपभोक्ता को दाल और खाद्य तेल के बाद चीनी भी महंगे दाम पर खरीदनी पड़ेगी।

सरकार ने मिल मालिकों के इस तर्क को तरजीह दी है कि चीनी उत्पादन में उनकी लागत 37 रूपये प्रति किलो आती है, मगर उन्हें बाजार में इसे 28–29 रूपये किलो के भाव से बेचना पड़ता है। मिल मालिकों का मुनाफा सुनिश्चित करने हेतु सरकार समय–समय पर कदम उठाती रही है, परंतु किसानों को लागत मूल्य देने से हमेशा परहेज किया है। हालिया प्रस्ताव के तहत इस वर्ष मिल मालिकों द्वारा उचित एवं लाभकारी मूल्य यानी एफआरपी में केवल 182.50 रूपये ही किसानों को दिए जाने की योजना है। अब तक पूरा दाम मिल मालिकों द्वारा वहन किया जाता रहा है। केंद्र सरकार अपनी नई घोषणा के जरिये चीनी मिल मालिकों का बोझ साझा करने को तैयार दिखी है, लेकिन गन्ने के दाम बढ़ाकर किसानों को राहत देने को वह कतई राजी नहीं है। पिछले दो वर्षों से गन्ने का भाव सिर्फ 10–10 रूपये प्रति क्विंटल की दर से बढ़ाया गया है जबकि चीनी मिलों को सरकार द्वारा एकमुश्त 47.50 रूपये प्रति क्विंटल की राहत दी जा रही है।

मार्च 2015 तक शुगर डिवेलपमेंट फंड से महाराष्ट्र की 19 चीनी मिलों को केंद्र सरकार द्वारा 140 करोड़ रूपये की वित्तीय सहायता प्रदान की जा चुकी है। घरेलू चीनी मिलों का मुनाफा सुनिश्चित करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा चीनी पर इंपोर्ट ड्यूटी 15 फीसदी से बढ़ाकर 25 फीसदी कर दी गई, फिर इसे 40 फीसदी कर दिया गया। इंपोर्ट ड्यूटी ज्यादा होने के कारण बाहर से चीनी मंगाना भी काफी हो गया। दूसरी तरफ चीनी का एक्सपोर्ट सामान्य रखने के सारे उपाय किए गए हैं। वर्ष 2014–15 के दौरान सरकार ने रॉ शुगर के निर्यात के लिऐ 4,000 रूपये प्रति टन के हिसाब से एक्सपोर्ट सब्सिडी दी है। इस योजना के तहत कुल 14 लाख टन रॉ शुगर का निर्यात हुआ यानी चीनी बाहर भेजने के लिऐ 560 करोड रूपये सरकार की जेब से गए।

इससे पहले वर्ष 2013–14 में भी सरकार द्वारा रॉ शुगर के निर्यात पर सब्सिडी का प्रबंध किया गया था। पिछली सरकार द्वारा भी चीनी मिल मालिकों को रियायत के रूप में एंट्री टैक्स तथा बिक्री टैक्स में छूट देकर लगभग 11 रूपये प्रति क्विंटल की वित्तीय सहायता प्रदान की गई थी। मौजूदा सरकार के अब तक के कार्यकाल में किसानों के हित में कोई बड़ा कदम नहीं उठाया है। किसानों को एमएसपी के साथ 50 फीसदी लाभकारी मूल्य देने के अपने चुनावी वादे

से वह पहले ही मुकर चुकी है। वित्त मंत्री जीएसटी पर आम सहमति बनाने के लिऐ तमाम राजनैतिक दलों के दरवाजे खटखटा रहे हैं। उसी तर्ज पर एमएसपी का अपना वादा पूरा करने के लिए भी वे कुछ क्यों नहीं करते हैं।

कमजोर पड़ती आवाज

सरकार को सूखाग्रस्त राज्यों के मुख्यमंत्रियों की बैठक तुरंत बुलानी चाहिए। 320 से अधिक जिले सूखे की लपेट में हैं। राहत प्रदान करने की प्रक्रिया लगभग ठप हैं। राज्य सरकारों की निष्क्रियता को दोषी बताकर केंद्र सरकार पल्ला झाड़ना चाहती है।

किसान समर्थक संगठनों की क्षीण होती शक्ति तथा राजनैतिक दलों में किसान वर्गों का घटता प्रतिनिधत्व भी उनके वर्ग हितों की उपेक्षा का बड़ा कारण है। उत्तर भारत में कभी चौ. चरण सिंह का संगठन और बाद में भारतीय किसान यूनियन हर साल किसानों, खासकर गन्ना किसानों के मुद्दों पर संघर्ष छेड़ते थे। उनकी अनुपस्थिति से इन वर्गों की लड़ाई और कमजोर हुई है।